

कियन्तमुपसर्गं भो करिष्यति भवान्मुनेः। इत्युक्त्वा कोपतः पित्रे जिनदत्ताय तं ददौ ॥१२९॥
ततोसौ जिनदत्ताख्यः श्रेष्ठी लज्जाभरान्वितः। कुबेरदत्तोपि पुत्रः पश्चात्तापं विधाय च ॥१३०॥
नत्वा तं मेरुवद्धीरं मुनीन्द्रं सत्तपोनिधिम्। भक्त्या क्षमापयित्वा च तस्यैव चरणान्तिके ॥१३१॥
त्रिधा वैराग्यमासाद्य जैनीं दीक्षां सुखप्रदाम्। गृहीत्वा तौ मुनी जातौ निजात्मपरतारकौ ॥१३२॥
श्रीमज्जिनेन्द्रचन्द्रोक्त-प्रोल्लसद्बोधसिंधवः। सारसम्यक्त्वरत्नाढ्या लसच्छीलोर्मिराजिताः ॥१३३॥
ये ते मुनये नित्यं सुरेन्द्राद्वैः समर्चिताः। अस्माकं वन्दिता भक्त्या शान्तये सन्तु शर्मदाः ॥१३४॥
जातः श्रीमतिमूलसंघतिलके श्रीकुन्दकुन्दाव्यये विद्यानन्दिगुरुप्रपट्टकमलोल्लासप्रदो भास्करः।
श्रीभट्टारकमल्लिभूषणगुरु रत्नत्रयालंकृतः। कुर्यात्सूरिमतल्लिको गुणनिधिर्नित्यं सतां मङ्गलम् ॥१३५॥

इति कथाकोशे भट्टारक-श्रीमल्लिभूषण-शिष्य-ब्रह्मनेमिदत्तविरचिते सगभयाधिकारे

मणिवतमुनि-तुंकारी-कथावर्णनायां द्वितीयः परिच्छेदः।

४२. पिण्याकगन्धस्य कथा

प्रणम्य त्रिजगन्नाथं श्रीजिनं सारशर्मदम्। वक्ष्ये पिण्याकगन्धस्य चरित्रं धनलोभिनः ॥१॥
कांपिल्यनगरे राजा नाम्ना रत्नप्रभोभवत्। राज्ञी विद्युत्प्रभा जाता रूपसौभाग्यमण्डिता ॥२॥

मन में हो उसे करो। मुझे उसकी परवा नहीं। घड़े का छुपाने वाला कुबेरदत्त अपने पिता और मुनि का यह परस्पर का कथोपकथन छुपा सुन रहा था। मुनि का अन्तिम निश्चय सुन उसकी उन पर बड़ी भक्ति हो गई वह दौड़ा जाकर झट से घड़े को निकाल लाया और अपने पिता के सामने उसे रखकर जरा गुस्से से बोला-हाँ देखता हूँ आप मुनिराज पर अब कितना उपसर्ग करते हैं? यह देखकर जिनदत्त बड़ा शर्मिन्दा हुआ। उसने अपने भ्रम भरे विचारों पर बड़ा ही पछतावा किया। अन्त में दोनों पिता-पुत्रों ने उन मेरु के समान स्थिर और तप के खजाने मुनिराज के पाँवों में पड़कर अपने अपराध की क्षमा कराई और संसार से उदासीन होकर उन्हीं के पास उन्होंने दीक्षा भी ले ली, जो कि मोक्ष-सुख की देने वाली है। दोनों पिता-पुत्र मुनि होकर अपना कल्याण करने लगे और दूसरों को भी आत्मकल्याण का मार्ग बतलाने लगे। वे साधुस्तन मुझे सुख-शान्ति दें, जो भगवान् के उपदेश किये सम्यग्ज्ञान के उमड़े हुए समुद्र हैं, सम्यक्त्वरूपी स्तनों को धारण किये हैं और पवित्र शील जिसकी लहरें हैं। ऐसे मुनिराजों को मैं भक्तिपूर्वक नमस्कार करता हूँ। मूलसंघ के मुख्य चलाने वाले श्रीकुन्दकुन्दाचार्य की परम्परा में भट्टारक मल्लिभूषण हुए हैं। वे मेरे गुरु हैं, रत्नत्रय-सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र को धारण किये हैं और गुणों की खान हैं। वे आप लोगों का कल्याण करें ॥११५-१३५॥

४२. पिण्याकगन्ध की कथा

सुख देने वाले और सारे-संसार के प्रभु श्रीजिनेन्द्र भगवान् को नमस्कार कर धन लोभी पिण्याकगन्ध की कथा लिखी जाती है ॥१॥

रत्नप्रभ कांपिल्य नगर के राजा थे। उनकी रानी विद्युत्प्रभा थी। वह सुन्दर और गुणवती थी।

श्रेष्ठी श्रीजिनदत्ताख्यो जिनपादाब्जषट्पदः। राजादिपूजितो धीमान् श्रावकाचारकोविदः ॥३॥
 तत्रैव नगरे श्रेष्ठी परः पिण्याकगन्धवाक्। द्वात्रिंशत्कोटिसुद्रव्यो लोभाद्भुङ्क्ते खलं खलः ॥४॥
 द्रव्यं लब्ध्वा कुधीर्यस्तु दातुं भोक्तुं क्षमो न हि। पापतः कृपणत्वाच्च स भुङ्क्ते दुःखमेव च ॥५॥
 तस्य स्त्री सुन्दरी नाम्नी विष्णुदत्तः सुतो जनि। एकदा राजकीयं च तडागं खनता तदा ॥६॥
 उडुनैकेन संलब्ध्वा सुवर्णकुशिकाभृता। मञ्जूषा कर्मयोगेन चिरकालस्थिता ततः ॥७॥
 महाकिट्टिप्रलिप्तत्वा-देका लोहस्य मूल्यतः। दत्ता श्रीजिनदत्ताख्यश्रेष्ठिने कुशिका मुदा ॥८॥
 सोपि श्रेष्ठी सुधीर्ज्ञात्वा पश्चात्स्वर्णमनोहरम्। पापभीरुस्तदा तेन सुवर्णेन सुखप्रदाम् ॥९॥
 जिनेन्द्रप्रतिमां कृत्वा तत्प्रतिष्ठां जगद्धिताम्। कारयामास सद्दृष्टि-धर्मिणामीदृशी मतिः ॥१०॥
 द्वितीया च कुशी तेन जिनदत्तेन धीमता। परद्रव्यमिति ज्ञात्वा गृहीता नैव तद्व्रतात् ॥११॥
 ततः पिण्याकगन्धस्तां गृहीत्वा लोहमूल्यतः। ज्ञात्वा सुवर्णमयीं तां च पुनर्देहीति संजगौ ॥१२॥
 तथाष्टानवतिः कुश्यः प्रच्छन्नं चोडुकेन हि। तस्य तावद्विनैर्दत्ता लोहमूल्यादजानता ॥१३॥

यहीं एक जिनदत्त सेठ रहता था। जिनधर्म पर इनकी गाढ़ श्रद्धा थी। अपने योग्य आचार-विचार इसके बहुत अच्छे थे। राजदरबार में भी इसकी अच्छी पूछ थी, मान-मर्यादा थी। यहीं एक और सेठ था। जिसका नाम पिण्याकगन्ध था। इसके पास कई करोड़ का धन था, पर तब भी वह मूर्ख और बड़ा लोभी था, कृपण था। वह न किसी को कभी एक कौड़ी देता और न स्वयं आप ही अपने धन को खाने-पीने, पहनने में खर्च करता और न ही ख़ाया करता था। इसके पास सब सुख की सामग्री थी, पर अपने पाप के उदय से या यों कहो कि अपनी कंजूसी से वह सदा ही दुःख भोगा करता था। उसकी स्त्री का नाम सुन्दरी था। उसके एक विष्णुदत्त नाम का लड़का था ॥२-६॥

एक दिन राजा के तालाब को खोदते वक्त उडु नाम के मजूर को सोने के सलाइयों की भरी हुई लोहे की सन्दूक मिल गई। वह सन्दूक वहाँ हजारों वर्षों से गड़ी हुई होगी। यही कारण था कि उसे खूब कीटों ने खा लिया था। उसके भीतर की सलाइयों पर भी बहुत मैल जमा हो गया। मैल से यह नहीं जान पड़ता था कि वे सोने की हैं। उडु ने उसमें से एक सलाई लाकर जिनदत्त सेठ को लोहे के भाव बेचा। सेठ ने उस समय तो उसे ले लिया, पर जब वह ध्यान से धो-धाकर देखी गई तो जान पड़ा कि वह एक सोने की सलाई है। सेठ ने उसे चोरी का माल समझ अपने घर में उसका रखना उचित नहीं समझा। उसने उसकी एक जिनप्रतिमा बनवा ली और प्रतिष्ठा कराकर उसे मंदिर में विराजमान कर दिया। सच है, धर्मात्मा पुरुष पाप से बड़े डरते हैं। कुछ दिनों बाद उडु फिर एक सलाई लिए जिनदत्त के पास आया। पर अब की बार सेठ ने उसे नहीं खरीदा। इसलिए कि वह धन दूसरे का है। तब उडु ने उसे पिण्याकगन्ध को बेच दिया। पिण्याकगन्ध को भी मालूम हो गया कि वह सलाई सोने की है, पर तब भी लोभ में आकर उसने उडु से कहा कि यदि तेरे पास ऐसी सलाइयाँ और हों तो उन्हें यहाँ दे जाया करना ॥७-१२॥

मुझे इन दिनों लोहे की कुछ अधिक जरूरत है। मतलब यह कि पिण्याकगन्ध ने उडु से कोई

ततः पिण्याकगन्धाख्यः स श्रेष्ठी धनलम्पटः। भागिनेयविवाहार्थं भगिन्याग्रहतो द्रुतम् ॥१४॥
 कुशीनां ग्रहणे पुत्रं तं निरूप्य प्रलोभतः। संप्राप्तः पिप्पलग्रामं प्रेरितः पापकर्मणा ॥१५॥
 तेनोडुना समानीतां विष्णुदत्तस्तु तां कुशीम्। किं कार्यमनया चेति तदासौ न गृहीतवान् ॥१६॥
 ततो राजभटेनाशु खननार्थं हठेन ताम्। गृहीत्वा खनता तेन सुवर्णकुशिका शतम् ॥१७॥
 इत्यक्षराणि संवीक्ष्य दर्शिता सा महीपतेः। उडुश्चाकारितो राज्ञा पृष्टोसौ संजगाविति ॥१८॥
 एका श्रीजिनदत्ताय कुशयोष्टानवतिर्ध्रुवम्। अन्याः पिण्याकगन्धाय मया दत्ता महीपते ॥१९॥
 आहूतो जिनदत्तोसौ प्रोक्त्वा तद्वृत्तकं पुनः। दर्शयामास जैनेन्द्रीं प्रतिमां पापनाशिनीम् ॥२०॥
 तां दृष्ट्वा भूपतिश्चित्ते परमानन्दनिर्भरः। वस्त्राद्यैः पूजयामास श्रेष्ठिनं तं गुणोज्ज्वलम् ॥२१॥

अट्टानवे सलाइयाँ खरीद कर ली। बेचारे उडु को उसकी सच्ची कीमत ही मालूम न थी, इसलिए उसने सब की सब सलाइयाँ लोहे के भाव बेच दीं ॥१३॥

एक दिन पिण्याकगन्ध अपनी बहिन के विशेष कहने-सुनने से अपने भानजे के ब्याह में दूसरे गाँव जाने लगा। जाते समय धन के लोभ से पुत्र को वह सलाई बतलाकर कह गया कि इसी आकार-प्रकार का लोहा कोई बेचने अपने यहाँ आवे तो तू उसे मोल ले लिया करना। पिण्याकगन्ध के पाप का घड़ा अब बहुत भर चुका था। अब उसके फूटने की तैयारी थी इसलिए तो वह पापकर्म की जबरदस्ती से दूसरे गाँव भेजा गया ॥१४-१५॥

उडु के पास अब केवल एक ही सलाई बची थी। वह उसे भी बेचने को पिण्याकगन्ध के पास आया। पर पिण्याकगन्ध तो वहाँ था नहीं, तब वह उसके लड़के विष्णुदत्त के हाथ सलाई देकर बोला-आपके पिताजी ने ऐसी बहुतेरी सलाइयाँ मुझसे मोल ली हैं। अब यह केवल एक ही बची है। इसे आप लेकर मुझको इसकी कीमत दे दीजिये। विष्णुदत्त ने उसे यह कहकर टाल दिया, कि मैं इसे लेकर क्या करूँगा? मुझे जरूरत नहीं। तुम इसे ले जाओ। इस समय एक सिपाही ने उडु को देख लिया। उसने खोदने के लिए वह सलाई उससे छुड़ा ली। एक दिन वह सिपाही जमीन खोद रहा था। उससे सलाई पर जमा हुआ कीट साफ हो जाने से कुछ लिखा हुआ उसे दिख पड़ा। लिखा यह था कि सोने की सौ सलाइयाँ सन्दूक में हैं। यह लिखा देखकर सिपाही ने उडु को पकड़ लाकर उससे सन्दूक की बाबत पूछा। उडु ने सब बातें ठीक-ठाक बतला दीं। सिपाही उडु को राजा के पास ले गया। राजा के पूछने पर उसने कहा कि मैंने ऐसी अट्टानवे सलाइयाँ तो पिण्याकगन्ध सेठ को बेची हैं और एक जिनदत्त सेठ को। राजा ने पहले जिनदत्त को बुलाकर सलाई मोल लेने के बाबत पूछा। जिनदत्त ने कहा-महाराज, मैंने एक सलाई खरीदी तो जरूर है, पर जब मुझे यह मालूम पड़ा कि वह सोने की है तो मैंने उसकी जिनप्रतिमा बनवा ली। प्रतिमा मन्दिर में मौजूद है। राजा प्रतिमा को देखकर बहुत खुश हुआ। उसने जिनदत्त की इस सच्चाई पर उसका बहुत मान किया, उसे बहुमूल्य वस्त्राभूषण दिए। सच है, गुणों की पूजा सब जगह हुआ करती है ॥१६-२१॥

पिण्याकश्रेष्ठिनो गेहं गृहीत्वा तत्कुटुम्बकम्। निक्षिप्तं कष्टतो राज्ञा कारागारे प्रकोपतः ॥२२॥
 येन तृष्णातुरेणोच्चैर्गृहीतं परवित्तकम्। निजं तेन स्वहस्तेन क्षयं नीतं च सर्वथा ॥२३॥
 विवाहान्तरं सोपि समागच्छन्निजं गृहम्। श्रुत्वा स्वगेहवृत्तान्तं मार्गे पिण्याकगन्धकः ॥२४॥
 इमौ पादौ दुरात्मानौ सर्वलक्ष्मीक्षयङ्करौ। गतौ ग्राममिति क्रोधाद्भ्रुत्वा पाषाणकेन च ॥२५॥
 मृत्वार्तध्यानतो कष्टं षष्ठेऽसौ नरके कुधीः। लेल्लकप्रस्तरे पापी पपात प्रौढलोभतः ॥२६॥
 इति ज्ञात्वा बुधैर्नित्यं विवेकोत्कृष्टमानसैः। त्याज्यः पापप्रदो लोभो यस्त्वन्यायप्रवर्तकः ॥२७॥
 स जयतु जिननाथः सर्वदेवेन्द्रवन्द्यः सकलगुणसमुद्रो विश्वतत्त्वैकदीपः।
 विगतनिखिलदोषो दत्तभव्यप्रलक्ष्मीर्विमलतरंगिरीशो बोधसिन्धुः सतां वै ॥२८॥

इति कथाकोशे कृपण-पिण्याकगन्धस्य कथा समाप्ता।

४३. लुब्धकस्य कथा

प्रोल्लसत्केवलज्ञानं श्रीजिनं त्रिजगद्गुरुम्। प्रणम्य परया भक्त्या वक्ष्ये लुब्धकथानकम् ॥१॥

इसके बाद राजा ने पिण्याकगन्ध को बुलवाया। पर वह घर पर न होकर गाँव गया हुआ था। राजा को उसके न मिलने से और निश्चय हो गया कि उसने अवश्य राजधन धोखा देकर ठग लिया है। राजा ने उसी समय उसका घर जब्त करवा कर उसके कुटुम्ब को कैदखाने में डाल दिया। इसलिए कि उसने पूछ-ताछ करने पर भी सलाइयों का हाल नहीं बताया था। सच है, जो आशा के चक्कर में पड़कर दूसरों का धन मारते हैं, वे अपने हाथों अपना सर्वनाश करते हैं ॥२२-२३॥

उधर ब्याह हो जाने के बाद पिण्याकगन्ध घर की ओर वापस आ रहा था। रास्ते में ही उसे अपने कुटुम्ब की दुर्दशा का समाचार सुन पड़ा। उसे उसका बड़ा दुःख हुआ। उसने अपने इस धन-जन की दुर्दशा का मूल कारण अपने पाँवों को ठहराया। इसलिए कि वह उन्हीं के द्वारा दूसरे गाँव गया था। पाँवों पर उसे बड़ा गुस्सा आया और इसीलिए उसने बड़ा भारी पत्थर लेकर उससे अपने दोनों पाँवों को तोड़ लिया। मृत्यु उसके सिर पर खड़ी ही थी। वह लोभी आर्तध्यान; बुरे भावों से मरकर नरक गया। यह कथा शिक्षा देती है जो समझदार है उन्हें चाहिए कि वे अनीति के कारण और पाप के बढ़ाने वाले इस लोभ का दूर ही से छोड़ने का यत्न करें ॥२४-२७॥

वे कर्मों को जीतने वाले जिन भगवान् संसार में सदा काल रहें जो संसार के पदार्थों को दिखलाने के लिये दीपक के समान हैं; सब दोषों से रहित हैं, भव्य-जनों को स्वर्ग-मोक्ष का सुख देने वाले हैं, जिनके वचन अत्यन्त ही निर्मल या निर्दोष हैं, जो गुणों के समुद्र हैं, देवों द्वारा पूज्य हैं और सत्पुरुषों के लिए ज्ञान के समुद्र हैं ॥२८॥

४३. लुब्धक सेठ की कथा

केवलज्ञान की शोभा को प्राप्त हुए और तीनों जगत् के गुरु ऐसे जिन भगवान् को नमस्कार कर लुब्धक सेठ की कथा लिखी जाती है ॥१॥